अध्याय 21

उसका (पूरे गुरु का) जीवन और आचरण

पूरे गुरु का जीवन और आचरण विलक्षण होता है जो उसको अन्य मनुष्यों से अलग कर देता है।

1. वह हमेशा भेंट देता है, लेता कभी नहीं। वह अपने शिष्यों से कभी छोटी से छोटी सेवा की भी इच्छा नहीं रखता। वह अपनी जीविका स्वयं कमाता है और कभी किसी पर बोझ नहीं बनता। अपनी पूर्ण व्यक्तिगत बचत, यदि कोई हो तो वह ज़रूरतमंदों की सहायता पर खर्च करता है।

गुरु पीरु सदाए मंगण जाइ।। ता कै मूलि न लगीऐ पाइ।।
घालि खाइ किछु हथहु देह।। नानक राहु पछाणहि सेइ।।
(1245)

(जो दूसरे लोगों की भेंट पर जीवन निर्वाह करता है, उसके पैर मत छूओ। ऐ नानक! जो अपने हाथों से कमा कर किसी ज़रूरतमंद को बांट कर गुज़ारा करता है, वही इस आध्यात्मिक रास्ते को पहचानता है।)

2. आध्यात्मिक उपदेशों के बदले में वह कोई फीस नहीं वसूलता। इसके विपरीत वह आध्यात्मिकता को परमात्मा की दूसरी भेंटों, जैसे रोशनी, हवा, पानी आदि की तरह मुफ्त देता है।

3. वह नम्रता की जीवंत मूर्ति होता है। परमात्मा की सभी शक्तियों और उस जैसी महानता के होते हुए भी वह किसी बात का श्रेय अपने ऊपर नहीं लेता बल्कि सब कुछ परमात्मा या अपने सत्गुरु की कृपा से किया हुआ मानता है। फलों से लदे पेड़ की शाख की तरह वह नीचे ही

नीचे झुकता जाता है और ऐसी सादगी एवं शान से रहता है जो केवल उसी के अंदर पाई जाती है।

आपस कउ जो जाणै नीचा।। सोऊ गनीऐ सभ से ऊचा।। (266)

(जो अपने आप को सबसे नीचा मानता है, वास्तव में वही सब से ऊँचा है।)

4. वह किसी से नाराज़ नहीं होता और सभी के साथ शांति से रहता है। वह दूसरों में कमी नहीं निकालता और जो उसकी बुराई भी करते हैं वह उन्हें भी मुस्काराते हुए क्षमा कर देता है। उसका प्यार सारी मानवता के लिए होता है। ईसा की तरह वह इस नियम का पालन करता है, ''अपने दुश्मनों से भी प्यार करो'', और इसी की शिक्षा देता है।

5. पवित्रता, प्रभुत्व और आध्यात्मिकता उसके अंतर से इस तरह प्रवाहित होती है जैसे नदी में ताज़गी देने वाला पानी बहता है जिससे जिज्ञासुओं के तपते और झुलसे दिलों को पुनर्जीवन मिलता है और वे उसके सही मार्गदर्शन में आध्यात्मिक मार्ग पर प्रसन्नतापूर्वक आगे बढ़ जाते हैं।

6. वह कोई विशेष पोशाक नहीं पहनता। वह आसान मध्य मार्गीय जीवन अपनाता है। उसका मार्ग एक तरफ तो कम से कम खर्चा करने वालों को पीछे छोड़ देता है और दूसरी तरफ कर्मकांडों और रीति-रिवाजों को। उसकी शिक्षाओं में प्राकृतिक सत्य होता है जो सीधे आत्मा की गहराइयों में उतर जाता है और हर व्यक्ति, चाहे वह किसी भी लिंग और आयु का हो, उसके द्वारा बतलाए गए आध्यात्मिक रास्ते का अनुसरण कर सकता है।

7. मदारी की भांति वह लोगों को आकर्षित करने और उनसे सम्मान जीतने के लिये कोई चमत्कार नहीं दिखलाता और न ही उनमें

विश्वास करता है। वह अपने रूहानी खज़ाने को अपने अंतर की गहराइयों में पूरी तरह से छिपा कर रखता है। जरूरत मुताबिक वह अपनी ताकतों को किसी विशेष अवसर पर प्रयोग कर सकता है। उसके शिष्य उसके गुप्त हाथ को अपनी मदद करते हुए प्रतिदिन अनुभव करते रहते हैं।

अध्याय 22

सत्गुरु की शारीरिक बनावट

सत्गुरु की शारीरिक विशेषताओं के बारे में भी हम पढ़ते हैं। शारीरिक रूप में भी उसमें कोई कमियाँ या कमज़ोरियां नहीं होतीं। उसकी चाल शान से भरपूर होती है। उसकी आँखें बबर शेर की तरह चमकती रहती हैं। उसका मस्तक चौड़ा होता है और पैरों में पदम होता है। उसके प्रकाशमान चेहरे पर साधारणतया एक काला तिल होता है।

शिराज़ के महान सूफी शायर हाफिज़ साहब फरमाते हैं :

अगर आँ तुर्के शीराज़ी बदस्त आरद दिले मारा,
बख़ाले हिन्दुअश बखश्म समरकन्दी बुखरा या।

(अगर वह शीराज़ का मुर्शिद मेरे मन को काबू कर ले तो मैं उसके चेहरे पर जो दिलकश तिल है, उस पर लोक – परलोक दोनों न्योछावर कर दूँ।)

अध्याय 23

सत्गुरु के प्रभाव (Influences)

सत्गुरु की उपस्थिति में मन नियंत्रण में आ जाता है और स्थिर हो जाता है।

जिन डिठिया मन रहसीऐ किउ पाईऐ तिन्ह संगु जीउ।।
संत सजन मन मित्र से लाइनि प्रभ सिउ रंगु जीउ।। (760)

(हम ऐसे महापुरुष की संगति कैसे पा सकते हैं जिसके दर्शन से चंचल मन मुग्ध हो जाता है और आत्मा में जीवन – तरंगें उमड़ने लगती हैं? सत्गुरु प्यारा हमारा सच्चा मित्र है और वह हमें प्रभु का नशा प्रदान करता है।

वह शान, नम्रता और पवित्रता से भरी तरंगें चारों ओर छोड़ता रहता है जो जीवों पर बहुत गहरा प्रभाव डालती हैं। उसके शब्द आध्यात्मिकता के रंग में रंगे होते हैं और आत्मा को खींच कर दूसरी दुनिया में ले जाते हैं और स्फूर्तिदायक नशा प्रदान करते हैं।

गर कशायद ऊ सरे अंबाने राज़,
जाँ ब सूए अर्श साज़द तर्को ताज़। – मौलाना रूम

(यदि वह अपने रहस्य प्रकट कर देता तो मेरी आत्मा तुरंत ही प्रभु की ओर उड़ जाती।)

2. उसके मस्तक और आँखों पर लगातार एक टक देखते रहने से एक विशेष प्रकार की ज्योति प्रकट होती है जो हमारी आत्मा को ऊपर की ओर खींचती है और थोड़ी देर के लिये बाहर फैली हमारी सुरत की धाराएँ खिंच कर ऊपर एकत्र हो जाती हैं और व्यक्ति उच्चतर चेतनता की अवस्था में पहुँच जाता है।

3. वह शान्ति का दूत होता है और सभी द्वंद्वों (dualities) से ऊपर होता है। उसके साथ रहने से हमारे अंदर आनंद और मंगलकामना की धाराएँ प्रवाहित होने लगती हैं। वह सभी विरोधी और शत्रुतापूर्ण भावों को नष्ट कर देता है और उनके बदले आत्मा में स्थिरता और टिकाव भर देता है जिससे वह धीरे – धीरे प्रभु की ओर चलने लग जाती है।

जिसु मिलिऐ मनि होई अनंदु सो सतिगुरु कहीऐ।।
मन की दुबिधा बिनसि जाइ हरि परम पदु लहीऐ।। (168)

(जिसकी संगति में व्यक्ति आनंदित अनुभव करता है, वह सत्गुरु होता है। वह मन को पवित्र करता है और आत्मा को मुक्ति प्रदान करता है।)

4. वह ओजस (ब्रह्मचर्य के फल) की शक्ति से परिपूर्ण होता है और उसका मस्तक प्रभु प्रकाश से दमकता रहता है। प्रभु सत्ता से भरे उसके शब्दों की चुंबकीय शक्ति से व्यक्ति बरबस खिंच जाता है। उसके नेत्रों से एक विशेष प्रकार की ज्योति चमकती है जो मछलीमार की तरह मन की तरंगों को क्षीण कर देती है। वह ख़मीर बनाने वाले की तरह मनरूपी रेगिस्तान में जीवन फूँक देता है।

5. अपनी तीक्ष्ण आँखों द्वारा वह व्यक्ति की भावनाओं और उद्वेगों को जान जाता है और अपने आदेशों को व्यक्तिगत आवश्यकताओं और समय के अनुसार ढाल देता है। यद्यपि वह आसानी से देख लेता है कि किसी के अंदर क्या है परंतु वह पर्दापोश होता है, दूसरों के सामने कभी किसी का रहस्य नहीं खोलता और उसे अपने तक ही सीमित रखता है। जो कोई उसके पास जाता है, चाहे भृंगी (भँवरा) हो या भिड़ (ततैया), फूल की तरह वह सबको सुगंध देता है। सत्गुरु के घर में हर वस्तु प्रचुर मात्रा में होती है और हरेक के मन की इच्छा पूरी हो जाती

है। प्रत्येक मानव, जो संत-सत्गुरु के संपर्क में आता है, वह आध्यात्मिक संस्कार ग्रहण करता है, जो समय बीतने पर अवश्य फलीभूत होता है। जिस क्षण कोई व्यक्ति सत्गुरु से मिलता है उसी क्षण से निश्चित रूप से उसके दिन अच्छे होने लग जाते हैं।

6. संत-सत्गुरु वास्तव में परमात्मा का पुत्र होता है। उसके दिल में सभी धर्मों और देशों के लोगों के लिये समान रूप से सच्चा प्यार होता है। वह सभी के अंदर परमात्मा की ज्योति देखता है, इसी लिये वह सारे संसार के भले की बात करता है।

अव्वल अलह नुर उपाया कुदरति के सभ बंदे।।
एक नूर ते सबु जगु उपजिया, कउन भले को मंदे।।(1349)

(सभी व्यक्ति एक ही ज्योति से उत्पन्न हुए हैं और इसी लिये मानव-मानव में कोई भेदभाव नहीं।)

नानक सतिगुरु ऐसा जाणीऐ जो सभ सै लए मिलाइ जीउ।।(72)

(ऐ नानक! सभी प्रकार के लोग सत्गुरु की शरण में आते हैं।)

सतिगुरु पुरखु दइआलु है जिसनो समतु सभु कोइ।।
एक द्रिसटि करि देखदा मन भावनी ते सिधि होइ।। (300)

(सत्गुरु सर्वज्ञ और सारी दुनिया के लिये कृपालु होता है। वह सब से बराबर का बर्ताव करता है और जो उसमें विश्वास रखते हैं, उन सब के काम वह संवारता है।)

वह न तो पुरानी धार्मिक मान्यताओं को तोड़ता है और न ही कोई नया धर्म चलाता है। वह सत् का गुरु होने के कारण किसी को भी धर्म और संप्रदाय की दृष्टि से नहीं देखता। उसके लिये सिर्फ यही महत्त्वपूर्ण है कि इंसान में आध्यात्मिक लक्ष्य को पाने की अभिलाषा हो क्योंकि संत-मत पर चलने के लिए इसी की ज़रूरत पड़ती है।

हिल मिल खेलूं शबद महि, अंतर रही न रेख।
समझे का मत एक है, क्या पंडित क्या शेख।। - कबीर

(जब व्यक्ति 'शब्द' में तल्लीन हो जाता है तब वह अपना-आपा बिल्कुल भूल जाता है। समझदार व्यक्ति के लिये यही एक रास्ता है, चाहे वह पंडित हो या शेख हो।)

हमारे बाहरी धार्मिक भेदभावों के बावजूद भी वह अंतरीय आध्यात्मिक मार्ग के बारे में निर्भयता से बात करता है। जो कोई संत-सत्गुरु से संपर्क स्थापित कर लेता है वह आध्यात्मिक पथ का सच्चा तीर्थयात्री हो जाता है और उससे सर्वाधिक लाभ उठाता है।

मौलाना रूम इसी लिये फरमाते हैं:

मर्दे हज्जी हमरही हाजी तलब,
ख्वाह हिन्दू ख्वाह तुर्को ख्वाह अरब।
मनगर अंदर नक्श अंदर रंगे ऊ,
बनगर अंदर अज्म व दर आहंगे ऊ।

(अगर तुम्हें हज पर जाने की ख्वाहिश है तो अपने साथ किसी मार्गदर्शक को ले लेना जिसको हज का अनुभव हो, चाहे वह हिंदू हो, तुर्क हो या अरब हो। वह कैसा लगता है, इसकी परवाह न करना, सिर्फ इतना ख़्याल रखना कि वह रास्ते को जानता हो और निपुण हो।)

हमें सत्गुरु से कोई सांसारिक संबंध स्थापित नहीं करना है। हमें उससे आध्यात्मिक निर्देश और मार्गदर्शन हासिल करना है और अगर वह हमें यह दे सकता है तो समझना चाहिये कि यह काफी है।

7. सत्गुरु-संत मालिक का रूप होता है। जैसे कुल-मालिक उन्हें बिना ज़बान के सूक्ष्म रूप में बिन बोले उपदेश देता है वैसे ही सत्गुरु के हुक्म शांतिपूर्वक रूप से कार्य करते हैं और वे बिना ज़ुबान से बोले ही जीव के हृदय में उतरते जाते हैं।

शेख़ फआल अस्त व बे आलात चू हक,
बा मुरीदाँ दाद बे गुफतन सबक।

(सत्गुरु, परमात्मा की तरह ही निराकार में स्थित होता है और बिना बोले अपनी शिक्षा शिष्यों को देता है।)

सत्गुरुओं की शिक्षाएँ बेज़बानी की ज़बान में होती हैं अर्थात् मूक भाषा में होती हैं, न तो वह बोलने में आ सकती है और न ही लिखने में।

तुम मेरी बात को क्यों नहीं समझते? क्योंकि तुम मेरे शब्द को नहीं सुन सकते। – जान 8:43 (बाइबल)

वह केवल रूह की ज़बान से बोलता है और इसे रूह द्वारा ही अनुभव किया जाता है।

मौलाना रूम फरमाते हैं :

अम्रे रब्बी अस्त रूह व सिर्रे खुदास्त।
ज़िक्र बेकामों बेजबाँ ऊ रास्त।

(आत्मा की ज़ात वही है जो परमात्मा की है। बाहरी सहायता, जैसे कि बोलने की इंद्रियाँ आदि के बिना भी यह अपने आप को व्यक्त कर सकती है क्योंकि यह परमात्मा का सार है।)

सत्गुरुओं की शिक्षाओं में स्थूल इंद्रियों का कोई खास काम नहीं होता। इंद्रियों द्वारा सब कुछ अपने आप होता रहता है।

अखी बाझहु वेखणा विणु कंना सुनणा।।
पैरा बाझहु चलणा विणु हथा करणा।।
जीभै बाझहु बोलणा इउ जीवत मरणा।।
नानक हुकमु पछाणि कै तउ खसमै मिलणा।। (139)

(व्यक्ति बिना आँखों के देखता है, बिना कानों के सुनता है, बिना पैरों के चलता है, बिना हाथों के काम करता है और बिना जुबान के

बोलता है, यह जीते-जी मरना है। ऐ नानक! ऐसा तभी होता है जब व्यक्ति ईश्वरीय इच्छा को जान पाता है और प्रियतम प्रभु को मिलता है।)

मौलाना रूम भी यही फरमाते हैं :

बे परो बे पा सफ़र मे करदमे,
बेलबो ते दंदाँ शकर मे खुर्दमे,
चश्म बस्ता आलमे मे दीदमे।

(मैं उन मंडलों में बिना पंखों के उड़ता हूँ, पैरों के बिना वहाँ यात्रा करता हूँ, बिना होंठ व दाँतों के स्वर्ग का भोजन करता हूँ और अपनी आँखें बंद करके वहाँ की शान को देखता हूँ।)

8. जिज्ञासुओं को सत्गुरु से अपने भ्रम दूर करने के लिए कभी-कभार ही प्रश्न करना पड़ता है क्योंकि वह अपने आप ही बिना पूछे उन प्रश्नों का उत्तर दे देता है जो श्रोतागणों के मन में उभरते रहते हैं।

9. सत्गुरु की शिक्षाएँ हमेशा 'नाम' या 'सुरत शब्द योग' पर ही केंद्रित रहती हैं। वह स्पष्ट शब्दों में हमें बताता है कि व्यक्ति बाहरी साधनों से परमात्मा को नहीं पा सकता, न ही उस तक पहुँच सकता है। वह परमात्मा हमारी आत्मा का मालिक है और इसी लिये उसे अंतर्मुख होकर अपने अंदर ही खोजना होगा।

सेंट मैथ्यू हमें बतलाते हैं :

मैं तुम्हें निश्चयपूर्वक बतलाता हूँ कि जब तक तुम एक छोटे बच्चे के समान सरल न बन जाओ, तुम प्रभु की बादशाहत में प्रवेश नहीं पा सकते। – मत्ती 18:3 (बाइबल)

फिर सेंट ल्यूक फरमाते हैं :

निश्चयपूर्वक मैं तुम्हें यह कहता हूँ कि जो कोई भी परमात्मा की बादशाहत को छोटे बच्चे की तरह स्वीकार नहीं करेगा, वह वहाँ प्रवेश नहीं पा सकेगा। – लूका 18:17 (बाइबल)

मानव महान है क्योंकि हमारा यह मानव शरीर ही सच्चा हरिमंदिर है तथा इसी में ज्ञानों के ज्ञान की ज्योति जगमगा रही है।

सेंट ल्यूक हमें बतलाते हैं :

परमात्मा की बादशाहत बाहर देखने-भालने से नहीं प्राप्त होती...... परमात्मा की बादशाहत तो तुम्हारे अंदर है। – लूका 17:20-21

एक मुस्लिम दरवेश इन्हीं स्वरों में फरमाते हैं :

मस्जिद अस्त ई दिल जिस्मश साजद अस्त।

(इंसानी दिल ही मस्जिद है और शरीर पूजा-स्थल है।)

फिर :

नकली मंदिर मस्जिदों में जाए सद अफसोस है,
कुदरती मस्जिद का साकिन दुख उठाने के लिए।
–तुलसी साहब

(आत्मा को यह शोभा नहीं देता कि परमात्मा के द्वारा बनाये हुए इस शरीर रूपी मंदिर-मस्जिद को छोड़ कर अपने प्रियतम-परमात्मा की तलाश में इंसानी हाथों द्वारा बनाये मंदिर मस्जिद में भटकती रहे।)

मग़रबी साहब भी हमें बतलाते हैं:

यार दर पहलू चिरा ऐ बख़बर।
यार दर तू चेह गरदी दा बदर।

(तुम्हारा प्रियतम-परमात्मा तुम्हारे अंदर है और तुम इस बात से अनजान हो। वह तुम्हारी आत्मा की आत्मा है और तुम उसकी तलाश में बाहर भटक रहे हो।)

इस विषय में मौलाना रूम फरमाते हैं:

दर दिमाग़े तो गुलशनो मजलिस ।
सैर कुन तेज़ रौ ज़े मुर्शिद पुर्स ।

(तुम्हारे मस्तिष्क के अंदर बड़े आश्चर्यजनक बागीचे और सौंदर्य-स्थल हैं। यदि तुम उनका आनन्द लेना चाहो तो सत्गुरु के पास मार्गदर्शन के लिये पहुँचो।)

गुरबाणी में आया है :

विणु काइआ जि होर थै धनु खोजदे से मूड़ बेताले ।।
से उझड़ि भरमि भवाईअहि जिउ झाड़ मिरगु भाले ।। (309)

(जो उस अतुलनीय खज़ाने को बाहर दुनिया में खोजते हैं वे घोर अज्ञान में हैं । वे संसार रूपी मृग-तृष्णा में ही भटकते रह जाते हैं और हिरण की तरह कस्तूरी को बाहर झाड़ियों में खोजते रहते हैं।)

पिंड (स्थूल शरीर) ब्रह्मांड (विश्व) का ही छोटा नमूना है। एक ही आत्मा ब्रह्मांड तथा पिंड दोनों में काम कर रही है। जब तक हम इस पिंड में मौजूद अपनी आत्मा को नहीं पहचानते और उसके संपर्क में नहीं आते तब तक हम विश्वव्यापी ब्रह्मांडीय आत्मा (यानी परमात्मा) को देख व अनुभव नहीं कर सकते और उससे एकमेक नहीं हो सकते।

जब तक देहधारी आत्मा देह से अलग नहीं होती और इंद्रियों के घाट से ऊपर नहीं आती, तब तक यह ब्रह्मांडीय आत्मा (परमात्मा) से जुड़ नहीं सकती।

फिर भी हम परमात्मा को सदा इस बाहरी संसार में खोजते रहते हैं। हम परमात्मा को गुफाओं में, बर्फीले पहाड़ों की चोटियों पर, पवित्र नदियों के पानी में, रेगिस्तान के रेतीले टीलों पर तथा इंसानी हाथों से बने मंदिरों और मस्जिदों, गिरजों एवं सिनेगाहों (Synagogues) में खोजते हैं, इस लिये हम उसे पाने में असफल रह जाते हैं।

अगर हम अपने शरीर के अंदर अंतरीय रास्ते को जान लें तो हम अपने अंदर उस महाशक्ति और उसके असर का अनुभव पाने की आशा कर सकते हैं लेकिन यह अंतर्मुखता पराविद्या या आत्म-ज्ञान के किसी अनुभवी महापुरुष की सहायता के बिना संभव नहीं है क्योंकि केवल उसी के पास परमात्मा की बादशाहत की कुंजी है और उसके शब्द 'खुल जा सिमसिम' की तरह उस गुप्त द्वार को तुरंत खोल देते हैं।

गुर प्रसादी वेखु तू हरि मंदरु तेरै नालि ।। (1346)

(सत्गुरु के निर्देश के अनुसार अंदर झाँको और तुम अपने अंदर परमात्मा का सच्चा मंदिर पाओगे।)

10. सत्गुरु की शिक्षाएं अपने आप में पूर्ण होती हैं और उनकी परख वैसे ही की जा सकती है जैसे कि किसी अन्य विज्ञान की।

फिर भी, इस विज्ञान के अनुभव पुस्तकीय ज्ञान और बौद्धिकता से बहुत भिन्न हैं और ये किसी खराब दिमाग की कल्पना भी नहीं हैं जैसा कि कुछ लोग सोचते हैं।

संत हमेशा दृढ़ विश्वास और अख्तियार से बात करते हैं क्योंकि वे जो कुछ बोलते हैं आत्मा की गहराइयों से बोलते हैं। उनका ज्ञान न तो किसी पुस्तक से लिया गया होता है और न ही किसी सुनी-सुनाई कहानी के आधार पर होता है। वे हमें सीधे अपना ज़ाती (निजी)

अनुभव प्रदान करते हैं जो कि शुद्ध और निर्मल होता है। फिर वे हमें अंधविश्वास करने को नहीं कहते। इसके विपरीत वे कहते हैं कि हर जिज्ञासु स्वयं उन बातों को अपने अंदर अनुभव करके देखे।

सत्य वह है जिसका अनुभव तुरंत किया जा सके, युगों के बाद नहीं, चाहे आरंभ में वह अनुभव कितना ही कम क्यों न हो। सत्गुरु पदार्थों के मूल तक जाकर उनका अनुभव पाता है और तब कहीं दूसरों को बतलाता है।

नानक का पातिसाहु दिसै जाहिरा ।। (397)

(गुरु नानक देव फरमाते हैं कि उन्हें परमात्मा स्पष्ट दिखाई दे रहा है।)

रामकृष्ण परमहंस से जब नरेन (जो बाद में स्वामी विवेकानंद के नाम से विख्यात हुए) ने परमात्मा को देखने के बारे में पूछा तो उन्होंने उत्तर दिया, "हाँ बच्चा, मैंने प्रभु को देखा है जैसे मैं तुम्हें देखता हूँ।"

वास्तव में सभी संत-सत्गुरुओं को परमात्मा का अनुभव हुआ होता है और वे उसकी ज्योति और ज़िंदगी में मस्त रहते हैं और एक तरह से वे उसके (परमात्मा के) साथ काम करने वाले (Conscious Co-worker) हो जाते हैं।

शम्स तबरेज़ फरमाते हैं :

बबायद चश्म सरे माशूक दीदन,
कलामश रा बगोशे खुद शुनीदन,
निहां अंदर निहां बीहद जमालश,
बगोशे हिस फ़हम बकुनद कमालश ।

(परमात्मा को अपनी आँखों से देखना और उसकी आवाज़ को अपने कानों से सुनना अधिक अच्छा है। उसकी शान दो आँखों के

पीछे अंधकार के पर्दे के पीछे छिपी हुई है और उसकी महानता को अंदर ही देखा जा सकता है।)

बाइबल में हम पढ़ते हैं :

जब मुर्दे परमात्मा के पुत्र की आवाज़ सुनेंगे .... जो सुनेंगे, वे जीवित हो उठेंगे । – जान 5:25 (बाइबल)

ऐसी महान आत्माएँ कभी धर्मग्रंथों पर निर्भर नहीं करतीं क्योंकि आखिरकार धर्मग्रन्थ उन जैसी महान आत्माओं के अनुभवों के लिखित रिकार्ड ही हैं। वे सदेह सत् होते हैं और हमारे बीच रहते हैं। सभी वेद–शास्त्र उनके अंतर मौजूद स्रोत से निकलते हैं। वे (संत–सत्गुरु) उन धर्मग्रंथों से बहुत अधिक जानते हैं क्योंकि वे धर्मग्रंथ तो उनके असीम ज्ञानसागर व व्यक्तित्व का कण मात्र है। सत्गुरुओं की शिक्षाएँ बहुत आज़ाद होती हैं और सदेह आत्माओं को मुक्ति और स्वतंत्रता प्राप्त कराती हैं।

मैं ज़िंदगी की रोटी हूँ, जो मेरे पास आयेगा, कभी भूखा नहीं रहेगा और जो मुझ पर विश्वास करेगा, कभी प्यासा नहीं रहेगा ।

– जान 6:35 (बाइबल)

मलार की वार में गुरु नानक हमें बतलाते हैं कि किसी संत–सत्गुरु की क्या पहचान है:

घर महि घरु दिखाइ देह सो सतिगुरु पुरखु सुजाणु ।।
पंच सबद धुनिकार धुनि तह बाजै सबदु नीसाणु ।।
दीप लोअ पाताल तह खंड मंडल हैरानु ।।
तार घोर बाजिंत्र तह साचि तखति सुलतानु ।।
सुखमन कै घरि रागु सुनि सुंनि मंडलि लिव लाइ ।।
अकथ कथा बीचारीऐ मनसा मनहि समाइ ।।

उलटि कमलु अंमृति भरिआ इहु मनु कतहु न जाइ ।।
अजपा जापु न वीसरै आदि जुगादि समाइ ।।
सभि सखीआ पंचे मिले गुरमखि निज घरि वासु ।।
सबदु खोजि इहु घरु लहै नानकु ता का दासु ।। (1291)

(जो इस घर में हमें सच्चा घर दिखला दे, वह सत्गुरु है। वह हमें प्रभु के 'शब्द' को सुनवा सकता है। सारे द्वीप, लोक, पाताल और खंड–ब्रह्मांड हैरान हैं, आनन्द में हैं क्योंकि सुलतान के तख्त से निकले संगीत को सुन रहे हैं। गुरु साहब उपदेश देते हैं कि तुम सुखमना नाड़ी के अंदर जारी इस राग को सुनो और सुन्न मंडल में लिव लगाओ। वह अकथ कथा है जिसको सुनने से आशा–मनसा खत्म हो जाएगी। इससे हृदय कमल उलट जाएगा, अमृत से भर जाएगा और मन शांत हो जाएगा। तब वह अजपा जाप कभी नहीं टूटेगा। जो भी इन पाँच शब्दों को सुनते हैं वे गुरमुख हो जाएँगे और निजघर पहुँच जाएँगे। जो कोई भी शब्द को पकड़ कर निजघर पहुँचता है, वह प्रभु का प्यारा है और नानक उसका दास बनना चाहेगा।)

वे अपने अनुयायियों को बाहरी साधनों की व्यर्थता के बारे में कभी धोखे में नहीं रखते। उनके सिद्धांत मुख्य तौर पर मात्र एक चीज़ के आस–पास घूमते हैं– 'शब्द' के साथ संपर्क और 'शब्द' की भक्ति। अनहद संगीत का अंतर में प्रकट होना संत–सत्गुरु की भेंट है।

कहु नानक जिसु सतिगुरु पूरा।। वाजे तो कै अनहद तूरा।। (393)

(हे नानक! जिसे पूरा सत्गुरु मिल जाता है उसे अपने अंतर में न खत्म होने वाली या अनहद धुन सुनाई देने लगती है।)

सत्गुरु हमेशा 'नाम' में तल्लीन रहता है और एक निपुण जहाज चालक की भाँति–सच्चे जिज्ञासुओं, सही उम्मीदवारों को सुरक्षापूर्वक

भवसागर से पार ले जाता है और जो परमात्मा का साम्राज्य उनके लिये खोया हुआ था, उन्हें पुनः अंतर में प्रदान करा देता है।

नामि रता सतिगुरु है कलिजुग बोहिथु होइ।।
गुरमुखि हौवे सु पारि पवै जिना अंदरि सचा सोइ।। (552)

('नाम' के रंग में सत्गुरु रंगा होता है और कलियुग में वह जहाज के कप्तान की तरह काम करता है। जो उस पर विश्वास करता है और उसके अंतर में निवास करता है, वह संसार-सागर से पार ले जाया जाता है और उसके अंतर में सत् प्रकट हो जाता है।)

11. संत-सत्गुरु कई बार असाधारण काम कर देता है जो साधारण मनुष्यों के लिये प्रतिबंधित होते हैं। ऐसा वह इसी लिये करता है ताकि सांसारिक मन वाले लोग उस से दूर ही रहें, जैसा कि कोई व्यक्ति मक्खियों के बारे में करता है ताकि वे सच्चे जिज्ञासुओं का रास्ता न रोक सकें।

दरे द रवेश रा दवबाँ न बायद।
बबायद ता सगे दुनिया न आयद।

(महात्मा को किसी चौकीदार की ज़रूरत नहीं होती। हाँ, सांसारिक कुत्तों को दूर रखने के लिये उसे उसकी आवश्यकता होती है।)

निंदा दरवेशों के लिये चौकीदार का काम करती है ताकि सांसारिक व्यक्ति उस रास्ते से दूर ही रहें।

भाई बाला की जन्म साखी में यह उल्लेख आता है कि एक बार गुरु नानक ने फरमाया :

कलियुग में दुखी मानवता की भलाई के लिये परमात्मा के बहुत से संत अवतरित होंगे।

भाई अजिता ने प्रश्न किया :

गुरुजी! क्या आप हमें यह बतलायेंगे कि हम पूर्ण संत को कैसे पहचानें, उसका बाहरी स्वरूप कैसा होगा और हम उसे कैसे पहचानेंगे?

सत्गुरु महाराज ने उत्तर दिया :

जब कभी कोई संत प्रकट होता है तब समाज के कुछ नेता, धार्मिक अंधविश्वासी व्यक्ति और जाति-पाति में फँसे लोग उसकी बुराई करेंगे। ऐसे विरले व्यक्ति होंगे जो सच्चे संत के पास पहुँचेंगे। बाकी सभी व्यक्ति, सत्गुरु और उसके शिष्यों की निंदा-चुगली व बदनामी करेंगे। जन-साधारण मस्जिद आदि में सामूहिक प्रार्थना और मंत्रजाप आदि में लगे रहते हैं, वे शब्दधारा के साथ अपनी सुरत को जोड़ कर सुरत शब्द योग का अभ्यास नहीं करेंगे। जब ऐसी परिस्थितियाँ पैदा होंगी तो मैं संतों के मार्ग को प्रचलित करने के लिये बारबार अवतरित होऊँगा और लोगों को अनहद वाणी के साथ जोड़ूँगा।

12. संत के आगमन के साथ-साथ अध्यात्म की बाढ़ आ जाती है और युगों-युगों से प्यासे दिल तरोताज़ा हो जाते हैं। जो भी उसके पास आता है, पापी या पुन्नी, उसकी संगत से लाभ उठाता है और राहत पाता है। उसकी संगत में कई लुटेरे, हत्यारे और डाकुओं का कायाकल्प हो गया। एक निपुण धोबी की तरह वह हमारी आत्माओं की सारी मैल —स्थूल, सूक्ष्म या कारण मैल को पूरी तरह तब तक धोता रहता है जब तक कि आत्मा अपनी मौलिक शान और ज्योति से चमकने नहीं लग जाती।

हम संत में निस्वार्थ प्रेम और बलिदान की जीती जागती मूर्ति पाते हैं। उसके उपदेश सर्वभौमिक होते हैं और इंसानी आत्मा के लिए होते

हैं। हज़ारों की संख्या में जिज्ञासु उसके आस-पास इकट्ठे होते हैं और उसकी शिक्षाओं से लाभ उठाते हैं।

13. संत परमात्मा का सच्चा पुत्र होता है और परमात्मा की सभी शक्तियाँ उसमें होती हैं। उसकी लंबी और ताकतवर भुजाएं सारी दुनिया को अपने आगोश में बांध लेती हैं और उसके सहायक हाथ संसार के प्रत्येक भाग में फैले होते हैं। उसके लिये नजदीकी या दूरी कोई मायने नहीं रखती। उसकी दया अचंभित रूप से और अनजाने तरीके से काम करती है और लोग बहुत सी कष्टप्रद और निराशापूर्ण परिस्थितियों से तथा मौत से भी बिना खरोंच लगे बच जाते हैं।

धरती और दिव्य मंडलों का मालिक होने के कारण वह घर की तरफ जाती आत्माओं का आत्मिक मंडलों में मार्गदर्शन करता रहता है और उसका नूरी स्वरूप हमेशा (शिष्य की) उस यात्री आत्मा के साथ रहता है जो शरीर छोड़ कर आगे मंडलों में जाती है।

मौलाना रूम फरमाते हैं :

दस्ते पीर अज़ ग़ायबाँ कोताह नेस्त,
दस्ते ऊ ज़ुज कुदरते अल्लाह नेस्त।

मर्द रा दस्ते दराज़आमद यकीं,
बर गुज़श्त अज़ आस्माने हफ़्तमीन।

(किसी संत-सत्गुरु का हाथ परमात्मा के हाथ से छोटा नहीं होता। वास्तव में यह हाथ स्वयं परमात्मा का ही होता है। हाँ, यह सात आसमानों के आर-पार फैला होता है और आत्माओं को आशा व विश्वास प्रदान करता रहता है।)

संत की अनगिनत निशानियों में से ये केवल कुछ थोड़ी सी निशानियाँ हैं।

इस संदर्भ में मौलाना रूम फरमाते हैं :

बस निशानी हा कि अंदर औलियास्त,
ख़ास आँ जाँ बवद कि आश्नास्त।

(एक महापुरुष में आश्चर्यजनक ताकतें और संभावनाएँ होती हैं जो कोई पवित्र आदमी ही अनुभव कर सकता है।)

सत्गुरु की बड़ाई और महानता आत्मा के सामने तब अधिक स्पष्ट होती है जब आत्मा शारीरिक और मानसिक सीमाओं को पार करके उसकी संगति में आगे बढ़ती है। सत्गुरु का नूरी स्वरूप यहाँ से आगे हमेशा उसके साथ रहता है, चाहे वह कहीं भी हो और अंतर-बाहर उसका मार्गदर्शन करता है, उसके सभी प्रश्नों का जवाब देता है और वह उसके भविष्य का एकमात्र मालिक और रक्षक होता है। इस अवस्था में व्यक्ति पूरी तरह से उसमें लीन हो जाता है और कह उठता है :

गुरु मेरै संगि सदा है नाले।। (394)

यानी सत्गुरु सदा ही मेरे अंग-संग मौजूद है क्योंकि अब वह सत्गुरु के वचनों की सच्चाई को अनुभव करने लगता है।

संसार ऐसे लोगों से भरा हुआ है जो गुरु और संत-सत्गुरु होने का दावा करते हैं लेकिन वे सभी लोग जो ताकत और नाम प्रसिद्धि के पीछे भागते हैं, शायद इस भूमिका को नहीं निभा सकते और इस कठिन कर्त्तव्य को पूरा नहीं कर सकते। मानव को ऐसे नकली संतों से बच कर रहना चाहिए जो भेड़ों के रूप में खूंखार भेड़ियों से कम नहीं हैं।

किसी सच्चे गुरु की भूल कर भी परीक्षा लेने की कोशिश न करो, उससे कोई लाभ नहीं। उसकी उपस्थिति अपने आप मन को वश में कर लेती है।

मौलाना रूम फरमाते हैं :

हेच न कुश्द नफस रा जुज़ ज़िल्ले पीर,
दामने आँ नफस कुश रा सख़्त गीर।

गर बगीरी सख़्त आँ तौफ़ीके हूस्त,
हर की कुव्वत दर तू आयद जज़्बे ऊस्त ।

(पीर के साये के बगैर मन को कोई काबू में नहीं कर सकता। ऐसे व्यक्ति को कस कर पकड़ लो। अगर आप ऐसा कर सकते हैं तो यह उसी की कृपा से होगा और उसके बाद उसकी ताकत तुम्हारे अंदर काम करने लगेगी।)

कबीर साहिब हमें उस रास्ते के बारे में बतलाते हैं:

तन मन ता को दीजिए, जाके विषया नाहिं ।
आपा सबही डारि कै, राखै साहिब माहिं ।।

मन दीया तिन सब दिया, मन की लार सरीर।
अब देवे को कछु नहीं, यों कहे दास कबीर ।।

तन मन दिया तो भल कीया, सिर का जासी भार।
कबहूँ कहै कि मैं दिया, घनि सहैगा मार।।

तन मन दिया तो क्या हुआ, निज मन दिया न जाय।
कहें कबीर ता दास से, कैसे मन पतियाय ।।

तन मन दिया आपना, निज मन ता के संग ।
कहै कबीर निर्भय भया, सुन सतगुर परसंग ।।

निज मन तो नीचा कीया, चरन कंवल की ठौर।
कहै कबीर गुरदेव बिन, नज़र न आवै और ।।

(अपना मन और तन उसके अर्पण कर दो जिसकी अपनी कोई

इच्छा नहीं। अपने बारे में कोई ख़्याल मत करो और उसी के ध्यान में स्थित हो जाओ। मन के बाद क्या बचा रहता है? शरीर भी नहीं । कबीर साहब कहते हैं कि अब अर्पण करने को कुछ भी बाकी न रहा। तन और मन उसके हवाले करने से कुछ बोझा उठाना बाकी नहीं रहता। जो इस बलिदान का घमंड करेगा, वह भी दंड भुगतेगा। क्योंकि अंतर में बीज या कारण मन से कौन अलग हो सकता है? ऐ कबीर! मन कैसे काबू आ सकता है और उसे कैसे अर्पित किया जा सकता है? मन और तन के साथ-साथ तुम निज मन को भी अर्पित कर दो। ऐ कबीर ! सत्गुरु की बात सुनने के बाद ही व्यक्ति निडर बन पाता है। सत्गुरु के चरण कमलों में अपने निज मन को अर्पित कर दो। ऐ कबीर! इसके बाद सत्गुरु के नूरी स्वरूप के अलावा कुछ और नहीं दिखता ।)

अध्याय 24

गुरु, गुरुदेव, सत्गुरु और मालिक की एकता

धर्मग्रंथों में हम पढ़ते हैं कि परमात्मा निराकार है। वह बिना आँखों के देखता है, बिना हाथों के अपना काम करता है, बिना पैरों के चलता है और बिना कानों के सुनता है।

वह सर्वव्यापक है परन्तु उसे देखा नहीं जा सकता। वह सारे विचार, तर्क-वितर्क, समझ और सूझबूझ से परे है। मनुष्य सीमित बुद्धि और समझ के द्वारा उस तक नहीं पहुँच सकता। तो फिर हम परमात्मा को कैसे देख सकते हैं और कैसे प्यार कर सकते हैं? एक ही वर्ग या जाति के प्राणियों में सदा आपस में प्रेम प्यार और मिल कर रहने की भावना होती है। हवा में उड़ने वाले पक्षी इकट्ठे झुंड बना कर उड़ते हैं। एक ही तरह के पशुओं में प्यार होता है और वे भी इकट्ठे रेवड़ों और झुंडों में इधर-उधर घूमते हैं। मनुष्य स्वभाव से ही सामाजिक प्राणी है और अपने साथियों के साथ समाज बनाए बिना नहीं रह सकता।

ध्यान का अर्थ है चित्त-वृत्तियों को एकाग्र करना। जब तक ध्यान टिकाने के लिए आँखों के सामने कोई वस्तु न हो तो ध्यान कैसे बनेगा? इंसान की इसी मूलभूत ज़रूरत को पूरा करने के लिए भगवान राम और कृष्ण (काल के अवतारों)* ने मानव चोला धारण किया और इसी उद्देश्य के लिए संत महापुरुष, सतपुरुष या दयाल के अवतार इस संसार में आते हैं। सत्—दृष्ट और अदृष्ट—सारी सृष्टि का आधार है; अविनाशी सचखंड से लेकर काल देश, नाशवान स्थूल देश तक का आधार है।

---

*काल और दयाल एक ही प्रभु सत्ता के दो रूप हैं जैसे बिजली एक स्थान पर आग जलाती है और दूसरे स्थान पर बर्फ जमाती है ।

किसी मुस्लिम फकीर ने उसका वर्णन किस ख़ूबसूरती से किया है:

उर अगर खुदा अस्त खुद मे आयद।

(अगर वह खुदा है तो खुद आए।

वास्तव में उसे इंसानी स्तर पर आना ही पड़ता है क्योंकि तभी मनुष्य उसके बारे में जान सकता है।

जो आत्माएँ प्रभु को पाने के लिए तड़पती हैं और उस तक पहुँच नहीं सकतीं, उन्हें वह प्रभु सत्गुरु के रूप में उपदेश देकर अपने हुक्म को लागू करता है।

वह उन्हें बताता है कि वह (सत्गुरु) देह रखता है लेकिन वह देह नहीं होता। वह सभी देहधारी आत्माओं को बताता है कि देहाभास से ऊपर कैसे उठा जाता है और वह अपनी तवज्जो का उभार देकर उन्हें शरीर की कैद से बाहर खींचता है और उनका मित्र और मार्गदर्शक बन जाता है।

इस तरह से निराकार को आकार धारण करना पड़ता है, एक इंसानी पोल अपनाना पड़ता है जहाँ से वह अपनी प्रभुता को प्रकट कर सके ताकि दुखी और असहाय लोग उसका लाभ उठा सकें। वह हमें बताता है कि हमारी असली कीमत क्या है और हम किस तरह अपनी खोई हुई बादशाहत को पा सकते हैं जहाँ से सृष्टि के आदि में हमें निकाल दिया गया था।

संत-सत्गुरु के शरीर रूपी पोल पर परमात्मा की पूरी शक्ति प्रकट होती है और इसी लिये उसको सच्चे अर्थों में प्रभु देहधारी कहा जा सकता है जो यह खुशख़बरी लेकर जाता है। परमात्मा और उसकी बादशाहत निकट ही है और सही दिशा में प्रयत्न और अभ्यास से उसे आसानी से प्राप्त किया जा सकता है।

जिसने सत् को जान लिया, वह सत्गुरु है। वास्तव में सत्गुरु, सत् देहधारी है। 'शब्द' ('नाम') वास्तव में सदेह हो जाता है और हमारे दरमियान निवास करता है और उसकी हिदायत और मार्गदर्शन से हम उसके साथ चल पड़ते हैं। उसकी तरह हम भी 'शब्द' का रूप बन जाते हैं और परमात्मा की दैवी योजना में हाथ बँटाने लग जाते हैं।

गुरु परमेसरु एको जाणु।। जो तिसु भावै सो परवाणु।। (864)

जो बोलै पूरा सतिगुरु सो परमेसरि सुणिआ।।
सोई वरतिआ जगत महि घटि घटि मुखि भणिआ।। (854)

(यह आप निश्चय कर के जान लें कि गुरु परमात्मा से अलग नहीं होता । गुरु की इच्छा परमात्मा की इच्छा ही होती है।)

अध्याय 25

एकता का स्वरूप

वास्तव में सत्गुरु सत् से एकमेक होता है क्योंकि वह सत् में समाया होता है और सत् के नशे में मस्त रहता है। सत् असीम और सर्वव्यापी है लेकिन यह इंसानी चोले में स्वयं प्रकट होकर लोगों के बीच रहते हुए काम करता है- आप उसे किसी भी नाम से पुकारो: सत्गुरु, मुर्शिद, गुरु आदि।

वह रोशनी का मीनार होता है जो भवसागर में गोते खाते लोगों को सत् की रोशनी से मालामाल कर देता है और तड़पती इंसानियत को रास्ता दिखाता है। वह बिजली के ऐसे स्विच की तरह होता है जो बिजली घर (प्रभु से) से जुड़ा हो। परन्तु रूहानियत की दौलत वह हर इंसान को उसकी ज़रूरत के अनुसार बाँटता है।

वह शरीर रखता है पर खुद शरीर नहीं होता बल्कि उस में काम करने वाली प्रभु-सत्ता होता है। यही बात आत्मा-देहधारियों यानी हम पर भी लागू होती है। हम भी वह नहीं हैं जो कि हम प्रतीत होते हैं यानी हम शरीर नहीं बल्कि आत्मा हैं, जो इस शरीर को चलाती है।

आत्मा की ज़ात या रूप वही है जो कि सत्गुरु में काम करने वाली सत्ता का है हालाँकि यह अनगिनत पर्दों में लिपटी हुई है और अनंत सीमाओं में बँधी हुई है। जब आत्मा अनेक पर्दों और सीमाओं से मुक्त हो जाती है और निरोल अवस्था को पा जाती है तो यह सत्गुरु की शान और महानता को देखने वाली हो जाती है क्योंकि वह वह क्षितिज है जहाँ मृत्युलोक (इह लोक) और परलोक मिलते हैं और जहाँ से प्रभु की ज्योति का सूर्य उगता है और सारी सृष्टि में उजाला करता है। हम प्रभु की महानता, शान और सौन्दर्य का अंदाज़ा सत्गुरु की भौतिक देह

को देखकर नहीं लगा सकते। उसका अनुभव पाने के लिए हमें उसके स्तर तक ऊँचा उठना होगा।

एवडु ऊचा होवै कोइ।। तिसु ऊचे को जाने सोइ।। (5)

क्योंकि प्रभु का रूप आत्मिक है इसलिए हमें भी आत्म-विश्लेषण द्वारा अपनी आत्मा को विभिन्न पर्दों से मुक्त करना होगा क्योंकि केवल आत्मा ही आत्मा का अनुभव कर सकती है, उसे न इंद्रियों से जाना जा सकता है, न मन से और न ही बुद्धि से।

सत्गुरु की आँखें नशे से भरे प्याले होते हैं जो अंतर अनंत में खुलती हैं और बाहर इस सीमाबद्ध संसार में। इन आँखों से प्रभु का नूर चमकता दिखाई देता है - परछाई रहित नूर, जिसकी तुलना इस संसार की किसी भी वस्तु से नहीं की जा सकती :

मौलाना रूम उसके बारे में बताते हैं :

मर्दे ख़ुदा मस्त बवद बे-शराब।
मर्दे ख़ुदा सैर बवद बे-कबाब।

(वह बिना शराब के मस्त रहता है और बिना भोजन के तृप्त रहता है।)

आगे कहते हैं :

चश्मे ऊ मस्तु ख़ुदा, दस्ते ऊ दस्ते ख़ुदा।

(उसकी आँखें प्रभु की आँखें हैं; उसके हाथ प्रभु के हाथ हैं।)

इस संसार में रहते हुए भी वह इस का बंदा नहीं होता, न ही वह हमारी तरह तन के पिंजरे में कैद होता है। वह मुक्त होता है और जब चाहे रूहानी खंडों-ब्रह्मंडों में आ-जा सकता है। उस में यह समर्था होती है कि वह अपनी इच्छानुसार हज़ारों-लाखों जीवों को रूहानी

मंडलों में जाने की सामर्थ्य प्रदान कर सकता है।

सत्स्वरूप महापुरुष सत् में अभेद होता है और उसमें संपूर्ण सत् समाया होता है जिसके द्वारा वह मुक्ति प्रदान करने के अपने मिशन को जारी रखता है।

सत्गुरु आकार रखते हुए भी निराकार होता है। वह शब्द-देहधारी होता है, प्रेम, आनंद और शांति का महान स्रोत होता है। इंसान इंसान से ही सीख सकता है और इसी प्राकृतिक नियम के अंतर्गत शब्द देह धारण करके हमारे बीच रहता है ताकि हमें रूहानी निर्देश दे सके और हमारा मार्गदर्शन कर सके। फिर अपनी तवज्जो का उभार देकर वह हमें निज घर जाने के लायक भी बनाता है और ये सब काम-काज करते हुए वह रोज़ाना अपनी इच्छानुसार अपने घर सचखण्ड या सत्लोक में पहुँच जाता है और निजानंद की मस्ती में आराम करता है। सत्गुरु और सत् एक ही हैं, दोनों में कोई भेद नहीं।

अपरंपार पारब्रहम परमेसरु नानक गुर मिलिआ सोई जीउ।।(599)

सतिगुरु मेरा सदा सदा ना आवै ना जाइ।।
ओहु अबिनासी पुरखु है सभ महि रहिआ समाइ।। (759)

(वह सभी चीज़ों से परे स्थित है, सृष्टि के आदि तत्व, ब्रह्म से भी परे है। गुरु नानक फरमाते हैं कि उन्हें ऐसा गुरु मिल गया है जो न आता है, न जाता है। वह अमर अविनाशी जीवन-तत्व है जो सब में व्याप्त है।)

हम सत्गुरु की कितनी भी प्रशंसा करें परंतु हम उसकी सही महानता का पता नहीं लगा सकते क्योंकि जब कुछ भी अस्तित्व में नहीं था, तब उसका अस्तित्व था और उस से ही सभी अन्य वस्तुएँ, सम्पूर्ण सृष्टि और सारे खंड-मंडल अस्तित्व में आए।

गुरु की महिमा किआ कहा गुरु बिबेक सतसरु।।
ओहु आदि जुगादि जुगह जुगु पूरा परमेसरु।। (379)

(सत्गुरु की बड़ाई कौन कर सकता है? वह सत् का स्रोत होता है। वह अपरिवर्तनीय है और युग-युगों तक सारे संसार को जीवंत करता रहा है।)

गुरवाणी में यह कहा गया है कि ध्यानपूर्वक अपने अंदर झांकी मार कर खोजबीन करने से व्यक्ति इस परिणाम पर पहुँचता है कि सत्गुरु ही सत् है और सत् ही गुरु है, इन दोनों में किसी तरह का अंतर नहीं होता।

समुंदु विरोलि सरीरु हम देखिआ इक वसतु अनूप दिखाई।।
गुर गोविंदु गोविंदु गुरु है नानक भेदु न भाई।। (442)

(अपने अंतर के समुद्र का मंथन करने पर एक चीज़ उभर कर ऊपर आई है- गुरु ही गोविंद है और गोविंद ही गुरु है। ऐ नानक! इन दोनों में कोई अंतर नहीं है।)

सर्वशक्तिमान परमेश्वर वास्तव में एक संत के रूप में रहता है और अपनी योजना को उसके द्वारा क्रिया रूप देता है।

गुर महि आपु रखिआ करतारे।।
गुरमुखि कोटि असंख उधारे।। (1024)

(प्रभु आप सत्गुरु में निवास करता है और अनेक जीवात्माओं के लिये वह मुक्ति पाने का साधन बन जाता है।)

बिनु गुर प्रेम न लभई जन वेखहु मनि निरजासि।।
हरि गुर विचि आपु रखिआ हरि मेले गुर साबासि।। (996)

(सत्गुरु के बिना प्रेम के बारे में कोई नहीं जान सकता क्योंकि हर

कोई प्रेम से खाली है। हरि, सत्गुरु के अंतर में निवास करता है और सत्गुरु जीवों और हरि को जोड़ने वाली कड़ी है।)

कबीर साहब हमें बतलाते हैं कि वे परमात्मा के साथ एकमेक हैं।

अब हम तुम एक भए हहि एकै देखत मनु पतीआही।।(339)
अब तउ जाए चढ़े सिंघासनि मिले सारिंग पानी।।
राम कबीरा एक भए है कोइ न सकै पछानी।। (969)

(अब मैं आप में एकमेक हूँ और स्वयं को धन्य मानता हूँ। सब से ऊँचे लोक में पहुँच कर मैं उस में इतना अधिक समा गया हूँ कि कोई भी राम और कबीर में भेद नहीं कर सकता।)

शम्स तबरेज़ भी इसी स्वर में फरमाते हैं :

हम इतने एकजुट हो गये हैं, जैसे आत्मा और शरीर, कि इसके पश्चात् कोई भी यह नहीं कह सकता कि मैं आप से अलग हूँ।

ईसा भी कहते हैं :

मैं और मेरा पिता एक हैं। — *जान 10:30 (बाइबल)*

जिसने मुझे देखा, उसने मेरे पिता को देखा।

— जान 14:9 (बाइबल)

वास्तव में परमात्मा और सत्गुरु समुद्र और उसकी लहरों की तरह हैं। जब लहरें उठती और गिरती हैं तो क्षण भर के लिए वे अलग प्रतीत होती हैं लेकिन जैसे सागर का सार पानी है वैसे ही उनका सार भी पानी होता है।)

ठीक ऐसे ही पानी की बूँद होती है। जब उसे समुद्र से अलग करते हैं तो वह एक बूँद होती है लेकिन जिस क्षण वह समुद्र में मिल जाती है

वह अपना व्यक्तित्व खो देती है और समुद्र का ही हिस्सा बन जाती है।

परमात्मा निराकार है। जब वह सत्गुरु रूप में प्रकट होता है तो लोगों को उपदेश और उनके मार्गदर्शन के लिये कोई रूप धारण करता है।

नानक सोधे सिंमृति बेद।। पारब्रहम गुर नाही भेद।। (1142)

(वेदों और धर्मग्रथों के अध्ययन के बाद गुरु नानक इस नतीजे पर पहुँचे कि पारब्रह्म और सत्गुरु में कोई भेद नहीं।)

परमात्मा 'शब्द' है जिसका अनुभव प्रभु आत्मज्ञान के प्यासे लोगों को सत्गुरु के द्वारा देता है।

गुर महि आपु समोइ सबदु वरताइआ।।

सचे ही पतीआइ सचि समाइआ।। (1274)

(प्रभु गुरु में बसता है और भक्तों को शब्द से जोड़ देता है। वह सत् में समाया होता है और सत् से तल्लीन होता है।)

आपे सतिगुरु आपि सबदु जीउ जुगु भगत पिआरे।। (246)

(वह स्वयं सत् भी है और सत्गुरु भी। भक्तों की भलाई के लिये वह हर युग में अवतरित होता है।)

पवित्र बाइबल में हम पढ़ते हैं :

'शब्द' सदेह हुआ और हमारे बीच रहा...सत् और कृपा से भरा हुआ। – जान 1:14 (बाइबल)

गुरवाणी में हमें मिलता है :

गुर सतिगुर सुआमी भेद न जाणहु
जितु मिलि हरि भगति सुखांदी।। (77)

(सत्गुरु और स्वामी में कोई भेद नहीं होता। पहले से संपर्क करने से दूसरे की भक्ति प्राप्त होती है।)

हरि का संतु सतगुरु सत पुरखा जो बोलै हरि हरि बानी।।
जो जो कहै सुणै सु मुकता हम तिसकै सद कुरबानी।।(667)

(परमात्मा से मिले इंसान को सत्गुरु या सत्पुरुष कहा जाता है और वह केवल हरि की बात करता है। जो कोई उसकी बात सुनता है वह मुक्ति प्राप्त कर लेता है।)

सर्वशक्तिमान प्रभु से जुड़े रहने के कारण गुरु सभी का कर्ता और करणहार है और सारी सृष्टि व जीवों का पालनकर्ता है।

गुरु करता गुरु करणहारु गुरमुखि सची सोइ।। (52)
गुरु परमेसरु करणैहारु।। सगल सृसटि कउ दे आधारु।।(741)

गुरु सुखदाता गुरु करतारु।। जीअ प्राण नानक गुरु आधारु। (187)

हिंदी रामायण (रामचरितमानस) के महान लेखक गोसाई तुलसीदास गुरु के बारे में कहते हैं :

बंदउं गुरु पद कुंज, कृपा सिंधु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज, जासु बचन रवि कर निकर।।

(मानस 1, सोरठ 5)

(जो मनुष्य रूप में स्वयं परमात्मा है, करुणा का सागर है, उस गुरु के चरण-कमलों में नमस्कार। उसकी कृपामयी वाणी हमारे अंदर के अंधे मोह के अंधकार को नष्ट करती है।)

पवित्र बाइबल में हम पढ़ते हैं कि ईसा ने एक बार अपने शिष्यों से पूछा, *''लोग इस मानव-पुत्र को क्या समझते हैं?''* और साइमन पीटर ने उत्तर दिया, *''आप क्राइस्ट हैं और जीवित परमात्मा के पुत्र हैं।''*

ईसा ने पीटर से कहा :

साइमन बार - जोना! आप धन्य हैं। यह बात तुम्हें किसी इंसान ने नहीं बतलाई बल्कि मेरे स्वर्गस्थ पिता ने तुम्हें बतलाई है।

और मैं भी तुम्हें कहता हूँ कि तुम पीटर हो और इस चट्टान पर मैं अपना चर्च बनाऊँगा और उसके सामने नर्क के द्वार नहीं खुलेंगे।

- मत्ती 16:13, 16 - 18 (बाइबल)

दूसरे अवसर पर उन्होंने उनसे अधिक स्पष्ट कहा :

फिलिप ने उनसे कहा, *''भगवन! हमें पिता के दर्शन करा दो और हमारे लिये यही काफी है।''* ईसा ने उनसे कहा, *''मैं इतने समय तुम्हारे साथ रहा और फिर भी तुमने मुझे नहीं जाना, फिलिप? जिसने मुझे देखा, उसने मेरे पिता को देखा। और फिर तुम ऐसा क्यों कहते हो कि हमें पिता के दर्शन करा दो? क्या तुम यह विश्वास नहीं करते कि मैं पिता में हूँ और पिता मेरे अंतर में निवास करता है।''*

- जान 14:8 - 10 *(बाइबल)*

गुरु अर्जुन ने बड़े ही स्पष्ट शब्दों में प्रभु के साथ अपनी एकता की बात हमें बतलाई है :

मंदर मेरे सभ ते ऊचे।। देस मेरे बेअन्त अपूछे।।
राजु हमारा सदा ही निहचलु।। मालु हमारा अखूटु अबेचलु।।
सोभा हमरी सभ जुग अंतरि।। बाज हमारी थान थनंतरि।।
कीरति हमरी घरि घरि होई।। भगति हमरी सभनी लोई।।
पिता हमारे प्रगटे मांझ।। पिता पूत रलि कीनी सांझ।।
कहु नानक जउ पिता पतीने।। पिता पूत एकै रंगि लीने।।

(1141)

(मेरा महल सब से ऊँचे दिव्य मंडल में हैं और मेरा साम्राज्य असीम है। मेरा अधिपत्य अमर है और मेरी दौलत अनगिनत है। मेरी शान युगों - युगों से मसहूर है और मेरे लोग हर जगह निवास करते हैं। सभी मेरी उपासना करते हैं और हर कोई मेरा भक्त है। मेरा पिता मेरे अंदर प्रकट है और अब पिता और पुत्र इकट्ठे काम करते हैं। ऐ नानक! पुत्र पिता के साथ चेतन सहकर्मी हो गया है और अब दोनों के मध्य कोई भेद नहीं रहा।)

हिंदू धर्मग्रथों में हमें मिलता है :

गुरुर ब्रह्मा, गुरुर विष्णु, गुरु देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात पारब्रह्मः तस्मै श्री गुरवे नमः।।

(गुरु ही ब्रह्मा है, वही विष्णु और शिव है। वही पारब्रह्म है और इसी लिये हम सत्गुरु के चरण - कमलों में प्रणाम करते हैं।)

मांडुक्य उपनिषद में कहा गया है :

जैसे पहाड़ से निकलने वाली बहुत सी नदियाँ विभिन्न मैदानों से गुज़रती हुई समुद्र में गिर कर अपना नाम रूप खो कर समुद्र हो जाती हैं, इसी तरह ब्रह्मज्ञानी दिव्य पुरुष, (प्रभु) में अपने नाम और रूप को खोकर उसी का रूप होकर समा जाता है।

यहाँ प्रश्न उठता है कि सर्वव्यापी आत्मा इंसान के सीमित शरीर में कैसे समा सकती है? गीता के सप्तम अध्याय (श्लोक 24 - 25) में भगवान कृष्ण ने इस प्रश्न का उत्तर दिया है :

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नम् मान्यत मामबुद्धियः।
नहां प्रकाशः सर्वस्य योगनायासमावृतः।
मूढोयं नाभिजानाति लोक नामजमव्ययं।।

(मेरे परम भव-स्वरूप (परे के स्वरूप) को न जानते हुए मूर्ख व्यक्ति मुझे प्रकट मनुष्य ही मानते हैं। वे मेरे इस अप्रकट, परम स्वरूप को नहीं जानते, जिसमें मैं सबसे परम ईश्वर-महेश्वर हूँ। मैं अपनी योग माया की शक्ति से ढका रहने के कारण जन-साधारण के सामने प्रकट नहीं होता। मुझ अजन्मा और अविनाशी को यह मूढ़ संसार नहीं जानता।)

आगे अध्याय 9, श्लोक 11 में भगवान कहते हैं :

अवजानति माम मूढ़ा मानूषं भवमाश्रिता।
परं भवजानतो मम भममहेश्वरं।।

(मेरे भावातीत स्वभाव को समस्त प्राणियों का स्वामी न समझते हुए मूर्ख लोग मुझे मनुष्य मात्र मान कर मेरी निंदा करते हैं।)

मौलाना रूम के अनुसार मुस्लिम दरवेशों पर भी यह बात लागू होती है :

दस्ते पीर अ़ज ग़ायबाँ कोतांह नेस्त,
दस्ते ऊ जुज़ क़दरते अल्लाह नेस्त।

मर्द रा दस्ते दराज़ आमद यक़ीन,
बर गुज़श्त आसमाने हफ़्तमीन।

बा कफ़श दरियाए कुल रा इत्साल,
हस्त बे चूं ओ चगाना दर कमाल।

दर बशर रूपोश कर्द अस्न आफ़ताब।
फ़हम कुन वल्लाहे-अलम बिलसवाब।

(सत्गुरु का बाजू परमात्मा की भुजा से छोटा नहीं होता और उसके द्वारा परमात्मा की ताकत काम करती है। सातवें लोक-आसमान तक

उसकी भुजा फैली होती है और उसके अतिरिक्त कोई भी उसकी महानता को नहीं दर्शा सकता। वास्तव में एक प्रज्वलित सूर्य उसके अंदर छिपा होता है और श्रेष्ठता इस बात में है कि उसे उसी रूप में जाना जाये जैसा कि वह स्वयं है।)

फिर मौलाना रूम कहते हैं :

नूरे हक़ ज़ाहर बदद अंदर वली।
नके बीं बाशी अगर अहले दिली।

(सत् की ज्योति किसी वली, सत्गुरु के दिल में चमकती है। अगर तुम मोमिन, गुरु के शिष्य हो तो तुम उसे उसी ज्योति के रूप में देख सकते हो।)

वे फिर कहते हैं:

गुफ़्त पैगम्बर कि हक़ फरमूदा अस्त ।
मन नगुंजम हेच दर बाला ओ पस्त ।
दर ज़मीनो आसमानो अर्श नीज़ ।
मन नगुंजम ई यकीं दान ऐ अज़ीज़ ।
दर दिले मोमन बिगुंजम ई अजब ।
गर मरा ख्वाही अज़ाँ दिलहा तलब ।

(हज़रत साहब ने एक बार घोषित किया कि खुदा ने उनसे कहा कि मैं न ऊँचाइयों में, न गहराइयों में, न धरती पर, न आकाश में और न स्वर्गों में समा सकता हूँ परन्तु हैरानी की बात है कि मैं अपने भक्त के दिल में बड़े आराम से समा जाता हूँ और जो कोई मुझ से मिलना चाहता हो वह मुझे वहीं तलाश करे।)

सूरतश दर ख़ाक ओ जाँ दा ला-मकाँ,
ला मकाने फ़ौक वहमे सालकाँ।

(यद्यपि वह सत्गुरु धरती पर रहता है तथापि उसकी आत्मा अधर (आसमान) में फैली होती है जहाँ दुनिया के बुद्धि विचार या फलसफे नहीं पहुँच सकते ।)

इसके बारे में हमें शम्स तबरेज़ बतलाते हैं:

आँ पादशाहे आज़म दरे बस्ता बूद मुहकम ।
पोशीदा दल्के आदम यानी कि बर दर आदम ।

(बादशाहों का बादशाह हमारे अंदर एक मोटे पर्दे के पीछे गद्दीनशीन है। इस हाड़ -मांस के पर्दे के अंदर छिपा वह हमें अपने पास लाने के लिये स्वयं आता है ।)

बुल्लेशाह फरमाते हैं :

मौला आदमी बण आइआ। ओह आइआ जग जगाइआ ।।

(परमात्मा इंसान को अज्ञान की निद्रा से जगाने के लिये खुद ही इंसान बन कर आया है।)

इसी तरह के गुरवाणी में हमें बहुत से संदर्भ मिलते हैं:

हरि जीउ नामु परिओ रामदासु।। (612)

(परमात्मा ने ही रामदास, सिक्खों के चौथे गुरु का नाम रखवा लिया है।)

हमरो भरता बड़ो बिबेकी, आपे संतु कहावै ।। (476)

(हमारा परमात्मा बड़ा विवेकवान है । वह स्वयं संत का चोला धारण कर लेता है।)

पीपा प्रणवै परम ततु है सतिगुरु होइ लखावै ।। (695)

(हे पीपा! केवल प्रणव, शब्द ध्वनि ही सत् और परम तत्व है। वही

सत्गुरु का रूप धारण करके हमारे मार्गदर्शन और उपदेश के लिये दुनिया में प्रकट हो जाता है।)

सतगुरु निरंजनु सोइ ।। मानुख का करि रूपु न जानु।। (895)

(सत्गुरु पवित्र, निर्मल निरंजन ज्योति है। उसे साधारण इंसान कभी न समझना।)

हरि का सेवकु सो हरि जेहा।।
भेदु न जाणहु माणस देहा।। (1076)

(परमात्मा का भक्त स्वयं भी हरि जैसा हो जाता है लेकिन साधारण मानव इस रहस्य को नहीं जानता।)

इसी तरह से भाई गुरदास फरमाते हैं :

एकंकार अकार करि गुर गोविंद नाउ सदवाइआ ।।

(एक - ओंकार अप्रकट परमात्मा आकार धारण करके गुरु का नाम ग्रहण कर के आया है।)

जो तुम्हें सत् (निराकार) के बारे में बतलाये और तुम्हें सत् (अपरिवर्तनीय अमर सत्य) के साथ जोड़ दे, वह कोई और नहीं बल्कि सत् देहधारी होता है । वह वास्तव में 'शब्द - धारा' है जो सबसे ऊँचे देश (सत्लोक) से प्रवाहित होकर आ रही है ।

मानवता को शिक्षित करने के लिये यह 'शब्द - धारा' संत की शक्ल धारण कर लेती है। यदि परमात्मा जो 'शब्द' धारा है, मनुष्य का रूप धारण करके हमारे बीच आकर हमें मानवीय और आध्यात्मिक रहस्यों को न समझाये तो मनुष्यों को आध्यात्मिक ज्ञान कैसे प्राप्त हो ?

इसी कारण कबीर साहब फरमाते हैं :

ब्रह्म बोले काया के ओले । काया बिन ब्रहम किआ बोले।।

(ब्रह्म स्वयं अपने ब्रह्मरूप में हमें नहीं समझा सकता। इंसानों को समझाने के लिये उसे भी इंसानी देह की आवश्यकता पड़ती है।)

वह परमात्मा जब तक हमारे जैसा आकार बनाकर इस स्थूल मंडल में आकर हमारे लिये जीता-जागता परमात्मा न बने, जिसे हम देख, सुन और समझ सकें, तब तक उस निराकार, निर्गुण प्रभु को हम शरीरधारी जान नहीं सकते । वह एक ही समय में परमात्मा भी होता है और मानव भी। वह परमात्मा और मानव के बीच कड़ी का काम करता है। वह 'शब्द'-सदेह होता है ताकि परमात्मा के बारे में उपदेश देकर मार्गदर्शन कर सके ।

रूस का सम्राट (ज़ार) पीटर दी ग्रेट नौकायन और जहाजरानी का काम सीखने का बड़ा इच्छुक था, इसलिये वह एक मामूली मज़दूर का वेश बना कर हालैंड चला गया। वहाँ बहुत से रूसी मज़दूर भी जीविका के लिये काम करते थे और पीटर भी उनके साथ काम करने लगा और बातों-बातों में उन्हें अपनी मातृभूमि के बारे में बतलाता और अपने साथ वापस चलने को कहता।

ये गरीब लोग (पुराने ज़ार द्वारा) रूस से निकाल दिए गये थे और वापस नहीं जा सकते थे, बस मन में मसोस कर रह जाते थे। पीटर उनसे यह कहता कि ज़ार उसका थोड़ा-थोड़ा जानकार है और हो सकता है कि वह उन्हें क्षमा दिला दे लेकिन बहुत कम लोग यह विश्वास कर पाए कि उन जैसे फटे-पुराने कपड़ों वाला एक मामूली मज़दूर बादशाह ज़ार से भी कोई संबंध रखता होगा।

जब पीटर अपनी ट्रेनिंग समाप्त करके अपने देश की तरफ वापस जाने लगा तो बहुत से लोग, जो उसकी बातों पर विश्वास रखते थे, साथ चल पड़े। जब वह रूस में प्रविष्ट हुआ तो जगह-जगह उसका शाही स्वागत-सम्मान होने लगा। जब देश से निर्वासित मज़दूरों ने

पीटर को मिले सम्मान को देखा, वे उत्साहित हो गये और उन्हें विश्वास हो गया कि वह उन्हें अवश्य क्षमा दिलवा देगा। आख़िर में जब उन्होंने देखा कि पीटर राजधानी में प्रवेश करके राजगद्दी पर बैठ गया है तो वे लोग अपने मज़दूर साथी के इस परिवर्तन पर दंग रह गये।

पीटर दी ग्रेट की तरह ही सत्गुरु भी सम्राट होता है। वह इस संसार की कैद में हमारे जैसा साधारण वेश धारण करके आता है। वह भी हमारी तरह ही अपनी जीविका कमाता है, हम से निज-घर, सत्लोक की बात करता है, घर वापस जाने के लिये हमारे अंदर ललक और चाह पैदा करता है और रास्ते में हमारे साथ जाने की और हमारा मार्गदर्शन करने की बात कहता है। बहुत थोड़े से लोग, जो उसके वचनों पर विश्वास करते हैं, वे उसकी सलाह पर चलना शुरू करते हैं, उन्हें इस बड़े भारी कैदखाने से छुड़ाकर परमात्मा के तख़्त की ओर वापस निज-घर ले जाया जाता है, जहाँ वे देखते हैं कि सत्गुरु के उस दिव्य स्वरूप में हज़ारों सूर्यों और चद्रमाओं के तेज से भी अधिक तेज है।

गुरु अर्जुन हमें बतलाते हैं कि जिस प्रभु ने हमें देश-निकाला देकर दुनिया में भेजा था, वह अब हमें वापस बुला रहा है:

जिन तुम भेजे तिनहि बुलाए सुख सहज सेती घर आओ।।(678)

अभ्यास पूरा करके जब रानी इंद्रमती सचखंड पहुँची तो उसने देखा कि उस के सत्गुरु कबीर वहाँ सत्पुरुष के तख़्त पर बैठे थे। यह देखकर वह बोली, ''महाराज! आप ने पहले ही मुझे क्यों नहीं बतलाया कि आप स्वयं सत्पुरुष हैं? मैं आपका विश्वास कर लेती।'' कबीर साहब ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया, ''तब मुझे तुम को विश्वास दिलाना कठिन था।''

सभी संत जो सत्लोक या अनामी देश में पहुँच जाते हैं, वे परमात्मा में अभेद हो जाते हैं और इस तरह से दर्जे में सभी बराबर हो जाते हैं।

अत: उन में से किसी को भी एक दूसरे से बड़ा या छोटा नहीं कहा जा सकता :

संत संत को दोइ कर जाने।। सो नर पड़ै नरक की खाने।।

सामान्यतया हज़ारों लोग संत-सत्गुरु के पास सत्संग में आते हैं और उसके सत्संग प्रवचनों को सुनते हैं लेकिन उनमें से प्रत्येक उसे अपने आध्यात्मिक और मानसिक लैवल के अनुसार ही देखता है।

कुछ उसे पवित्र मानव समझते हैं, कुछ उसे दार्शनिक और कुछ पढ़ा-लिखा इंसान मानते हैं। दूसरे उसे आदर्श नैतिक आदमी मानते हैं तो फिर कुछ दूसरे उसे निस्वार्थ कार्यकर्ता समझते हैं। ऐसे जीव दुर्लभ हैं जो उसके अंदर परमात्मा को देखते हैं।

इस प्रकार सब उसको (गुरु को) वैसा ही देखते हैं जैसा वे खुद बनना चाहते हैं और फिर उसी गुण को प्राप्त कर लेते हैं क्योंकि हरेक को वह वही कुछ बाँटता है जिसे पाने के वह योग्य है।

मानव देह में प्रकट होने के कारण उसका सर्वप्रथम कर्तव्य मानव-निर्माण (इंसान को इंसान बनाना) है और सदेह प्रभु होने के कारण उसका कर्तव्य परमात्मा का अनुभव देना है। यह सब कुछ इंसान की पुराने जन्मों की अपनी पृष्ठभूमि पर निर्भर करता है। वह मानव वास्तव में धन्य है जो प्रभु का रूप बनने के लिये पूर्णतया तैयार है क्योंकि ऐसे व्यक्ति के लिये वह तुरंत ही अपने प्रभुत्व को प्रकट कर देता है जैसे भगवान कृष्ण ने अर्जुन के सामने अपना विराट रूप प्रकट किया था जिस समय अपने अज्ञान के कारण उसने अपने क्षत्रिय-धर्म का पालन करने में झिझक की थी।

अंधा आँख वाले मानव को नहीं देख सकता और न ही उसे पकड़ सकता है जब तक कि आँख वाला मानव दया करके उसे हाथ पकड़ कर सही रास्ते पर न ले जाये।

इसी तरह से जब तक सत्गुरु अपने असली सत्स्वरूप का अनुभव न कराये तब तक उसके अंदर के प्रभु-रूप को हम नहीं पहचान पाते। यहाँ तक कि जो लोग सत्गुरु के साथ लगातार रहते हैं जैसे कि उनके निकट संबंधी, वे भी अक्सर उसके अंतर छुपे प्रभु-रूप को नहीं पहचान पाते।

जब तक वह आँख न बने, संत की अंतरीय प्रकृति को, उसके अंदर छुपे प्रभु को कोई व्यक्ति नहीं जान सकता। जो उसके अंदर परमात्मा को देख व पहचान सकता है, उसने वास्तव में परमात्मा को पा लिया है क्योंकि वह प्रभु उसके अंदर न केवल निवास करता है अपितु उसके द्वारा प्रकट रूप में काम भी करता है।

उसके शारीरिक चोले पर परमात्मा की ताकत काम करती है।

भाई नंदलाल फरमाते हैं :

ख़ुदा हाज़िर बवद दायम बबीं दीदारे पाकश रा।

(वह ख़ुदा ख़ुद हाज़िर-नाज़िर है। तू उसके पाक दर्शन कर।)

इसी तरह से गुरु नानक देव फरमाते हैं :

नानक का पातशाह दिस्से ज़ाहिरा। (397)

इसी तरह से जब नरेन (जो बाद में स्वामी विवेकानंद बने) पहले-पहल रामकृष्ण परमहंस से मिले तो उन्होंने उनसे पूछा, ''महाराज! क्या आप ने परमात्मा को देखा है?'' और रामकृष्ण ने उत्तर दिया, ''हाँ बच्चा! मैंने उसे देखा है, जैसे मैं तुझे देखता हूँ।''

इस तरह यह सब हमारी अंतरदृष्टि पर निर्भर करता है। अगर वह दिव्य-दृष्टि किसी के पास है या अगर सत्गुरु ऐसा चाहे तो सत्गुरु के अंदर से निकलती हुई परमात्मा की ज्योति दिखलाई पड़ सकती है। सारे

आध्यात्मिक अभ्यासों का उद्देश्य यही है कि हमारी अंतरीय आँख खुल जाए ताकि हम परमात्मा को दोनों जगह देख सकें– सर्वत्र सारी सृष्टि में फैला हुआ भी और सत्गुरु के अंदर सिमटा हुआ भी।

यह साक्षात्कार भी परमात्मा की बख़्शिश पर निर्भर करता है और कोई भी उसे अधिकार मान कर माँग नहीं सकता । जिस आत्मा ने युगों-युगों के अभ्यास से अपने आप को इस योग्य बना लिया है उसी को प्रभु की ओर से यह पवित्र भेंट मिलती है।